आपकी छोटी लड़की

● ममता कालिया

अन्ताक्षरी

कहानी माला – 21

आपकी छोटी लड़की

● ममता कालिया

"टुनिया, जरा भागकर चिट्ठी डाल आ।"

"मैंने गैस पर दूध चढ़ाया है। तू पास खड़ी रह टुन्नो। जब दूध उफनने लगे तब तू गैस बन्द कर देना।"

दिन-भर दौड़ती है टुनिया। स्कूल से आकर पढ़ाई करती है, थोड़ा-बहुत खाना खाती है और इसके साथ ही शुरू हो जाता है काम-पर-काम-पर-काम। घर के टेढ़े-से-टेढ़े और सीधे-से-सीधे काम सब टुनिया के जिम्मे। टुनिया बाजार से लकड़ी लायेगी, टुनिया पौधों में पानी देगी, टुनिया मम्मी को दवाई देगी, टुनिया बाहर सूख रहे कपड़े उठायेगी, टुनिया दस बार दरवाजा खोलेगी, दस बार दरवाजा बन्द करेगी।

टुनिया है तो तेरह की, पर लगती है ग्यारह की। न उसे दूध पीना अच्छा लगता है न अण्डा खाना। हल्का-फुलका बदन है उसका।

मम्मी की खातिर तो वह सारा दिन भागती है। कई ऐसे भी काम करती है जो उसे बिलकुल पसन्द नहीं, जैसे कि पाल साहब के यहाँ जाकर पापा को फोन करना, नल बन्द होने पर निचली मंजिल पर डॉ. जगतियानी के घर से पानी लाना, बाजार से काँदाबटाटा खरीदना और सामान मम्मी को पसन्द न आने पर उसे वापस करने दुकान पर जाना। एक बार खरीदकर वापस करना क्या इतना आसान होता है : पसीना आ जाता है। बुद्धू अलग बनना पड़ता है।

दीदी के साथ तो ऐसा नहीं करती मम्मी। दीदी उनका एक भी काम नहीं करती, फिर भी उसके सामने मम्मी कभी शिकायत नहीं करती। दीदी सुबह आठ बजे सोकर उठती है। उठते ही हुक्म चलाने लगती है, "टुनिया मेरे नहाने का पानी गरम करो। मम्मी आलू का पराठा बना दो।" दीदी नहाने चली जाती है और घर-भर उसके कॉलेज जाने के काम में इस कदर व्यस्त हो जाता है जैसे दीदी बड़े काम पर जा रही हो। दीदी एक महारानी नजर सब पर डाल शान से चल देती है।

बहुत नाज़ है टुनिया को अपनी बहन पर। दीदी टुनिया से चाहे जो काम ले ले, टुनिया कर देगी। कई बार दीदी टुनिया के हाथ में अपनी पढ़ाई की किताब थमाकर लेट जाती है। पढ़ाई करने का दीदी का यह प्रिय तरीका है। टुनिया किताब में से सब पढ़कर सुनाती है। बहुत होशियार है दीदी। एक बार का सुना ज्यों का त्यों याद हो जाता है उसे।

कॉलेज के उत्सव में दीदी का जयजयकार होता रहता है। मुख्य अतिथि एक के बाद एक दस पुरस्कार दीदी को देते हैं। अधिकतम अंक पाने पर अंग्रेजी, हिन्दी और फिलॉसफी प्रमाण-पत्र तो मिलता ही है। साथ ही गायन, नृत्य और अभिनय का भी। एक पुरस्कार व्यक्तित्व के लिए, एक वक्तृता के लिए।

पुरस्कार टुनिया को भी मिलते हैं अपने स्कूल में। पर वह तो इस कदर हड़बड़ा जाती है कि मंच तक पहुँचना मुश्किल हो जाता है। पुरस्कार लेते हाथ थर-थर काँपते हैं। वही रोज के चेहरे होते हैं फिर भी टुनिया कितना घबरा जाती है। दीदी बिल्कुल नहीं घबराती। एकदम बाहरी आदमी है मुख्य अतिथि। पर दीदी कुछ इस अन्दाज में उसके हाथों से पुरस्कार लेती है मानो ले नहीं, दे रही है।

जलसे के बाद टुनिया दीदी के साथ घर लौट रही थी। टुनिया को लग रहा था, ये उसी ने जीते हैं। आखिर वही तो दीदी को संवाद याद कराती है नाटकों के, वही दीदी को फिलॉसफी, हिन्दी और अंग्रेजी के पाठ सुनाती है।

बार-बार रास्ते में कभी कोई, कभी कोई दीदी को मुबारकबाद दे रहा था। तभी चार लड़कों के झुण्ड ने आकर दीदी को बधाई दी। फिर उनमें से एक नाटे से लड़के ने कहा, "पपीहा जी, हम लोगों में एक शर्त लगी है। राज कक्कड़ का कहना है यह लड़की जो आपके साथ है, आपकी बहन है। मेरा कहना है ऐसा हो नहीं सकता। मैं आपकी शान के खिलाफ इसे बोलने थोड़े ही दूँगा। आप असलियत बता दीजिए। हम लोगों में जलेबी की शर्त लगी है।" दीदी ने बड़े ही लापरवाही से कहा, "मेरी बहन है यह, तूर्णा सहाय।" लड़कों के मुँह अवाक रह गये। उन्होंने टकटकी लगाकर टुनिया को जाँचा, जैसे चिड़ियाघर में बच्चे बन्दर देख रहे हों। राज कक्कड़ ने विजेता अन्दाज में बाँहें चढ़ा लीं, "देखा, न मेरी खबर गलत नहीं हो सकती। है न धमाका?" नाटे लड़के ने हताश स्वर में कहा, "ये आपकी सगी बहन है?"

"हाँ, बाबा हाँ," दीदी ने हँसते-हँसते कहा।

टुनिया को पहली बार रोना-रोना-सा आया। कितने बेहूदा लड़के हैं। कैसे भद्दे मजाक करते हैं। यह क्या शर्त लगाने की बात है? कितनी बार वह दीदी के साथ कालेज आ चुकी है। बहन नहीं तो क्या चपरासिन है?

घर जाकर टुनिया ने किसी से कुछ न कहा पर रुलाई एक अन्धड़ की तरह मन में घुमड़ रही थी। किसी को उसकी ओर देखने का समय ही कहाँ था। कोई दीदी की पीठ ठोंक रहा था, कोई उसका मुँह चूम रहा था।

रात जब टुनिया अपने बिस्तर पर लेटी, उसे न जाने कहाँ से रुलाई आ गयी। उसे पता नहीं था, वह क्यों रो रही थी पर आँसू थे कि बहे जा रहे थे। लगातार रोने से नींद भी उड़ गयी। उन लड़कों ने क्यों कहा कि वह दीदी की कोई नहीं। और फिर अगर लड़कों ने बदतमीजी की भी, तो क्या दीदी उन्हें डपट नहीं सकती थी। क्या उसका हाथ अपने हाथ में ले, गर्व से नहीं कह सकती थी, "देखो, यह है मेरी बहन, मेरी अपनी छोटी बहन, तुम्हें दिखायी नहीं देता?"

रात भर की छटपटाहट के बाद टुनिया ने तय किया वह लड़कों की बातों पर बिल्कुल ध्यान नहीं देगी। वह अपना पूरा ध्यान पढ़ने में लगायेगी। दीदी के कॉलेज

अब कभी नहीं जायेगी। मम्मी कहेंगी, तब भी नहीं।

शनिवार को पापा ने सुबह बैठक साफ करवायी। उनकी बैठक बस टुनिया साफ कर सकती है। उनकी कामवाली कोलीन को तो जरा भी तमीज नहीं। जरूरी से जरूरी कागज, रद्दी समझ, कूड़े में बटोरकर फेंक देगी। टुनिया जानती है, कागज पापा की जान हैं। एक-एक चिट्ठी, एक-एक अखबार क्यों रखा हुआ है उसे पता है। मम्मी तो उकता जाती है इस सफाई-अभियान से। पर टुनिया नहीं थकती। वह इस काम को झाड़ू और झाड़न की जुगलबन्दी कहती है।

फर्श पर बिछे बिस्तर की चादर बदली गयी। किताबें ठीक से लगायी गयीं। मेजपोश धुले हुए बिछाये गये। एक बहुत बड़े साहित्यकार आनेवाले थे।

टुनिया किताबों की दुनिया से अनजान नहीं। किताबें उसे बेहद प्रिय हैं। वह कुछ भी और सब कुछ पढ़ डालती है, जो सामने आ जाये। यह जो साहित्यकार आने वाले हैं, श्री मुक्तिदूत, इनका उपन्यास भी उसने पढ़ा है। उसके मन में उन्हें देखने की बहुत इच्छा है। टुनिया जानना चाहती है वे दूसरे के मन की

बात इतनी आसानी से और इतनी अच्छी तरह से कैसे समझ लेते हैं। पापा थोड़ा-बहुत समझाते हैं, फिर हमेशा की तरह बोल देते हैं, ''अभी तू बहुत छोटी है।''

इतनी छोटी नहीं है टुनिया। दिल-दिमाग हजार-हजार सवालों से भरा पड़ा है। क्यों क्यों? उनके घर अधिकतर कलाकार और साहित्यकार आते हैं। और कई बार रहते हैं घर के सदस्य की तरह। मम्मी किचकिचाती रहती है, ''जब तक दो रोटी का ठिकाना नहीं था, फलानेजी गले से बँधे रहे। आज रोटी बोटी दोनों का इन्तजाम हो गया तो कैसे आँखें फेर लीं। जाने इन्हें अकल कब आयेगी।

पापा ने एक बार भी शिकायत नहीं की। न जाने कितने लोगों को पाँच रुपये से लेकर पचास रुपये तक उधार दिये जो डूब गये। पापा ने कहा, ''इसमें क्या झींकना, सारा जीवन ही एक लेन-देन है।'' इन झमेलों से बिल्कुल अलग-थलग दीदी एक अलग दिशा में दौड़ रही है। लगभग रोज शाम कोई-न-कोई कार्यक्रम चलता रहता है। कार्यक्रम के बाद दीदी घर आती है, कपड़े बदल वह आँख बन्द कर लेट जाती है बिस्तर पर, थोड़ी-थोड़ी देर में पापा या मम्मी आकर उसे देख जाते हैं। जब उसकी आँख लग जाती है तो हौले-से बत्ती बन्द करते हुए पापा

कहते हैं, ''बहुत परिश्रम पड़ता है बेबी पर। इसे रोजाना एक सेब दिया करो।''

पापा सुबह से बड़े जोश में हैं। मुक्तिदूतजी के उपन्यास और काव्य-संग्रह का फिर से पारायण हो रहा है। जगह-जगह लाल पेन्सिल से निशान लगाया जा रहा है, मुक्तिदूतजी से जमकर बहस करनी है। टुनिया भी साथ-साथ पढ़ रही है। इस कमरे का आलम अनोखा है। यहाँ बैठकर मन किताबों में रस जाता है। न समय का ध्यान रहता है, न काम का।

तभी मम्मी ने आकर कहा, ''टुनिया, चलो सनीचरी से सामान लाने।''

टुनिया का जोश जाम हो गया। सनीचरी का मतलब है सूखी मछली के गंधाते ढ़ेर, बाजार की कचर-पचर धूप, पसीना, धूल, बौड़म झोले, काँदा-बटाटा, गेहूँ, चावल, मसाले, पातड़भाजी, खट्टा चूका और खटारा रिक्शा।

मम्मी ने चिड़चिड़ाकर एक बार फिर कहा, ''सुनती नहीं है, फिर और धूप चढ़ जायेगी! जल्दी उठ।''

पापा ने किताब पर से नज़र उठायी और बोल पड़े बमककर, ''क्या तुम सुबह

से कुड़कुड़ शुरू कर देती हो। आटे-दाल के सिवा और कुछ पता भी है। नहीं जायेगी टुनिया। इतने बड़े साहित्यकार आ रहे हैं। किसी भी समय आ सकते हैं। यहाँ कौन बनायेगा चाय? जाना है तो कोलीन को लेकर जाओ।''

एक कटखनी नजर पापा और टुनिया पर डाल मम्मी चली गयीं। टुनिया को मज़ा आ गया। कैसी बाल-बाल बची वह सनीचरी से और कोलीन क्या खूब फँसी। अब जब पापा कहेंगे, वह ऐसी बढ़िया चाय बनायेगा कि मुक्तिदूतजी भी हैरान रह जायेंगे। दाल पहले से पिसी रखी है, पकौड़े तल देगी।

मुक्तिदूतजी एक तो पापा के हमउम्र हैं, दूसरे बात करने का तरीका भी अलग है। चकित है टुनिया। पापा ने बताया था मुक्तिदूतजी न नौकरी करते हैं, न व्यवसाय। पर कितने अलमस्त। किसी बात की फिक्र ही नहीं। शहंशाह-सा अन्दाज, गूँजभरी आवाज़। खाया उन्होंने कुछ नहीं, लेकिन चाय खूब तारीफ करके पी। पूछा, ''किसने बनायी, आपकी पत्नी ने?'' ''नहीं, टुनिया ने, यह मेरी छोटी लड़की तूर्णा, पढ़ने में बहुत तेज है और चाय बनाने में भी।'' मुक्तिदूतजी हँस पड़े, ''यह लड़की बहुत तरक्की करेगी। मैं तो कहता हूँ जो अच्छी चाय बना सकता है, वह मुश्किल-से-मुश्किल काम कर सकता है।''

तभी दीदी तैयार होकर कमरे में आयी। सफेद साड़ी-ब्लाउज में कितनी ताजा लग रही थी वह, फूल की तरह। मुक्तिदूतजी को नमस्कार कर दीदी ने पापा से कहा, ''पापा, हमें ठीक ग्यारह बजे पहुँचना है—आज से हमारा नाटक शुरू हो रहा है।'' ''ठीक है, चली जाना।'' पापा ने कहा।

मुक्तिदूतजी जानना चाहते थे कि क्या माधव मिश्रा अभी भी इस कालोनी में रहते हैं। ''रहते हैं'' पापा ने बताया, ''टुनिया बता देगी, जानती है। टुनिया बेटी, जरा मुक्तिदूतजी को माधव मिश्राजी के घर पहुँचा दो।'' ''भई, लेकिन लौटकर हम एक चाय और पियेंगे।'' ''जरूर-जरूर।'' पापा की मुस्कान खिल गयी। पापा को और क्या चाहिए। उनका मन तो बस स्वागत-सत्कार के लिए बना है।

टुनिया ने जरा भी देर नहीं लगायी। फौरन चल दी मुक्तिदूतजी के साथ। बाप रे, कितने लम्बे हैं, ताड़ की तरह। बात करते समय अगर इनकी तरफ देखना हो तो गर्दन में बाँयटा पड़ जाये।

मुक्तिदूतजी ने देखा—टुनिया उनके साथ लगभग भागते हुए चल रही है। उन्होंने

रफ्तार धीमी कर दी। पूछा, "यह तुम्हारी बहन थी न?" "आपको कैसे पता?" "वाह, तुमसे इतनी मिलती जो है।" टुनिया ने शायद गलत सुना है या मुक्तिदूतजी ने ही गलत कहा है। "सब तो कहते हैं मुझसे जरा भी नहीं मिलती।" "बहुत मिलती हैं। तुम्हें पता है तूर्णा। इन्सान लाख कोशिश करे वह बात पैदा नहीं कर सकता जो भगवान कर सकता है। जैसे किताबें छपती हैं, सब एक-सी, इसी तरह भगवान हर खानदान के नाक-नक्श की नकल रखता। तभी न जानकार लोग कहते हैं, 'अरे बबुआ तेरी नाक तो बिल्कुल दादी पर गयी है, ईश्वर एक बढ़िया मुद्रक है।" अपनी ही बात पर मुक्तिदूतजी हा-हा कर हँस दिये। टुनिया के मुँह से फौरन निकला, "आप भगवान को मानते हैं?" "क्यों, ऐसा तुम्हें क्यों लगा कि भगवान को माननेवाले कम होते जा रहे हैं।" "पता नहीं, एक बार पापा ने कहा था लोग ज्यों-ज्यों पढ़े-लिखे बन रहे हैं, उनकी भगवान पर से आस्था हिल रही है।" "यह तो पापा ने कहा था, तुम क्या कहती हो?" "मुझे भी ऐसा ही लगता है।" "नहीं, पापा को ऐसा लगता है, इसलिए तुम्हें ऐसा लगता है। टुनिया रानी, अलग से सोचो, क्या हमारे देश से कभी ईश्वर में विश्वास खत्म हो सकता है? अभी मैं चौराहे के बीचोबीच एक बौड़म-सा पत्थर रख दूँ सिन्दूर

में रँगकर। और खुद उस पर जाकर दो फूल चढ़ा आऊँ। फिर देखना तुम अपने लोगों की कितनी आस्था है। दस में से नौ आदमी यहाँ रुकेंगे, मत्था टेकेंगे, फूल-फल चढ़ायेंगे। इसे कहते हैं आस्था।" "या अन्धविश्वास।" टुनिया बोल उठी। "नहीं, विश्वास। वैसे विश्वास और अन्धविश्वास में बड़ा महीन-सा फर्क होता है। तुम अभी बहुत छोटी हो। वरना तुम्हें समझाता।"

आ गयी न वही बात। यह छोटी होना तो बवालेजान हो गया है। अच्छी-खासी बात समझ आ रही थी कि बीच में फिर 'अभी तुम बहुत छोटी हो।' इस वक्त मुक्तिदूतजी मेहमान हैं, वरना टुनिया पूछती, "छोटों को बड़ा बनने के लिए क्या करना पड़ता है? क्या सिर के बल खड़ा होना पड़ता है?

लीजिए आ गया माधव मिश्रा का घर। मिश्राजी घर पर हैं। टुनिया का काम खत्म। मुक्तिदूतजी अब मिश्राजी से बातों में मशगूल हो जायेंगे। दोनों साहित्यकार, दोनों बातूनी।

दो घंटे बाद मुक्तिदूतजी वापस लौटे। पहले चाय पी। पापा ने खाने के लिए

आग्रह किया। सहज भाव से वह रुक गये।

टुनिया ने अकेले हाथ सारा इन्तजाम किया। वह दौड़-दौड़कर गर्म फुल्का खिला रही थी। उसे बिल्कुल कष्ट नहीं हो रहा था। मुक्तिदूतजी कब-कब आते हैं!

"आपकी लड़की की आवाज बहुत अच्छी है, इसे तो रेडियो में भी आसानी से ले लेंगे।" मुक्तिदूतजी ने कहा। पापा उत्साह और गर्व से बताने लगे," उसे समय ही कहाँ है रेडियो के लिए। यह तो स्टेज की नामी कलाकार है। आये-दिन इसके कार्यक्रम होते रहते हैं। दो साल से कत्थक सीख रही है। कॉलेज भी जाना रहता है। पढ़ाई में हरदम अव्वल आती है।"

"कौन यह टुनिया?

"यह तो अभी बिल्कुल मूर्ख है, कुछ नहीं आता, वह मेरी बड़ी बेटी पपीहा।"

"नहीं सहाय साहब, मैं इसकी बात कर रहा हूँ, आपकी छोटी लड़की की। इसकी आवाज़ में एक संस्कार है। आजकल बहुत कम दिखायी देता है।"

फुलका लाते हुए टुनिया ने सुना,"आपकी छोटी लड़की...."

सहसा विश्वास नहीं हुआ टुनिया को। इस घर में दीदी की जयजयकार हुई है। दीदी के गाने पर तालियाँ बजी हैं; दीदी के नृत्य पर बधाई मिली है। दीदी

के प्रमाणपत्र मढ़ाये गये हैं। दीदी महान है। टुनिया से कोई पूछे दीदी क्या है?

पानी लाते-लाते टुनिया के कानों में मुक्तिदूतजी की आवाज़ पड़ी है, "सहाय साहब, आवाज़ से आप किसी की पूरी शख्सियत जान सकते हैं। सच्चे खरे इन्सान की आवाज़ नाभि से शुरु होती है और उदर से टकराती हुई, एक पूरी संस्कृति का दस्तावेज़ बन गले से निकलती है। आपकी छोटी लड़की की आवाज़ में यह सब है। उसकी आवाज़ एक समूची सम्भावना है।"

टुनिया का अंग-अंग सितार-सा झनझना उठा। क्या यह सच है? क्या यह सब उसी के लिए कह रहे हैं। इतने बड़े साहित्यकार झूठ क्यों बोलेंगे? शायद झूठ ही होगा। यों ही उसे खुश कर रहे हैं या पापा की खुशामद कर रहे हैं। खुशामदी तो नहीं लगते।

वह उनके सामने बोली ही कहाँ। वे ही बोलते रहे। क्या उन छोटे-छोटे अस्फुट जवाबों में से ही उन्होंने यह मणि ढूँढ़ निकाली? टुनिया ने सोचा था उन्होंने उसे मूर्ख मानकर ही ज़्यादा बात नहीं की।

पापा गर्दन हिलाते हुए उनके आगे मिठाई की प्लेट बढ़ाने लगे। पापा ने अपनी परिवार-प्रशस्ति शुरू कर दी, ''हमारे घर में सभी की आवाज़ बहुत अच्छी है। मेरे पिताजी की आवाज़ भी बहुत अच्छी थी। जब वे रामायण पाठ करते थे तो सारा मुहल्ला आ जाता था सुनने। पपीहा की आवाज़ तो सबसे अच्छी है। क्या बतायें, आज होती तो आपको उसका गाना सुनाते!''

कुछ नहीं लेना-देना दुनिया को इस परिवार-पुराण से। अब लाख बार घरवाले उससे चाय बनवाएँ, पानी मँगवाएँ, सब्जी कटवाएँ, कुछ नहीं व्यापेगा उसे। उसे आज यह कैसी सम्पदा मिल गयी है। उसके कानों में ठुमरी-सी छोटी यह बात किस कदर ठुमक रही है, 'आपकी छोटी लड़की.....आपक़ी छोटी लड़की।'

आपके जवाब के इन्तजार में--
शिवसिंह नयाल, अन्विता
'अलारिप्पु'
बी-६/६२, पहली मंजिल, सफदरजंग इन्कलेव,
नई दिल्ली-११००२६. दूरभाष : ६०६३२७

ज्योति लेजर टाइपसेटिंग
३/१ ईस्ट गुरुअंगद नगर, दिल्ली-६१